ISSN 2395-051X

आत्मनिर्भर भारत में नृत्यकला की भूमिका

डॉ. अपर्णा चाचोंदिया
सहा. प्राध्यापक - नृत्य
शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर, उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सारांश -

'आत्मनिर्भर भारत' ये वाक्यांश वर्तमान समय में न केवल लोकप्रिय हुआ अपितु इससे प्रेरणा पाकर भारतवासियों में स्वाभिमान की भावना जागी है और वे आत्मनिर्भर बनकर अपने समाज, गाँव, जिले और देश की प्रगति एवं आर्थिक विकास में अपना सहयोग प्रदान कर रहे हैं। भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी द्वारा 12 मई 2020 से इस अभियान का प्रारंभ भारत को समृद्ध, सम्पन्न एवं आत्मनिर्भर बनाने के उद्देश्य से किया गया था। 'आत्मनिर्भर' शब्द का अर्थ है स्वयं पर निर्भर होना न कि किसी दूसरे पर आश्रित रहना। व्यक्ति अपने कौशल का विकास कर स्वयं को इतना सक्षम बना सकता है कि उसे अपने आर्थिक विकास के लिए किसी अन्य पर आश्रित रहने की आवश्यकता नहीं रह जाती। हमेशा से ही भारत देश का गौरवशाली सांस्कृतिक इतिहास रहा है। भारत की आत्मनिर्भरता में सभी कलाओं की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है, क्योंकि भारत एक बहुसांस्कृतिक एवं कलाकौशल में समृद्ध देश के रूप में विश्वविख्यात है।

मुख्य शब्द - आत्मनिर्भर, संस्कृति, कला, कौशल।

वर्तमान में आत्मनिर्भरता को बहुत बढ़ावा दिया जा रहा है। कृषि, कुटीर उद्योग, व्यवसाय एवं अन्य कला कौशल के द्वारा भारतवासी अपने आपको स्थापित करने के लिए जागरूक हो रहे हैं, ताकि उन्हें स्वयं के विकास और जीविका के लिए किसी पर आश्रित न रहना पड़े। स्वयं के आर्थिक विकास के प्रति सजग स्वाबलंवी व्यक्ति ही एक आत्मनिर्भर समाज के निर्माण में अपना सहयोग प्रदान कर सकता है। भारत देश में अनेकों धर्म, संस्कृति के लोग रहते हैं। कलाओं और कलाकारों की देश में कमी नहीं है। गाना, बजाना और नाचना प्रफुल्लित मन की स्वाभाविक क्रियाएँ हैं, जो पशु-पक्षी, कीट-पतंग, देव-दानव और मनुष्य सभी में पाई जाती हैं। इन स्वाभाविक क्रियाओं को जब कोई व्यवस्था दी जाती है तो उसे 'कला' कहते हैं।[1] व्यक्ति के अंदर के भावों की कलात्मक तरीके से सौन्दर्यपूर्ण अभिव्यक्ति, जो सर्वप्रथम कलाकार में रस की सृष्टि करती है एवं उसके प्रदर्शन द्वारा दर्शक, श्रोता या रसिक जनों में रसानुभूति का माध्यम बनकर एक मनोरंजक आनंददायी वातावरण निर्मित करती है। प्राचीन काल में भारत में चौसठ प्रकार की कलाओं का प्रचलन था। सभी कलायें किसी न किसी माध्यम से भावों की अभिव्यक्ति करती हैं। चित्रकार कागज, केनवास, पेंट, ब्रश आदि के द्वारा अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है, कवि या लेखक कलम से, गायक गीत-गायन से, नर्तक अपने नर्तन से, अभिनेता अभिनय से अपने मनोभाव अभिव्यक्त करते हैं। किसी भी कलाकार की कला या अभिव्यक्ति तभी सफल मानी जाती है, जब सामने वाला व्यक्ति, श्रोता या दर्शक उसके द्वारा अभिव्यक्त भावों को उसी अर्थ में समझे जिस

रूप में कलाकार समझाना चाहता है। अभिव्यक्ति की इस सफलता के लिए एक कलाकार को कठोर साधना करनी पड़ती है तभी वह अपने कला-कौशल में निखार लाने में सक्षम हो पाता है। एक कलाकार हमेशा आत्मनिर्भर होता है उसकी कला कभी कोई छीन नहीं सकता वह अपने आप में एक विशेष व्यक्तित्व होता है। एक कलाकार में अनेकों कलाकार पैदा करने की क्षमता होती है ये कला के वंशवृक्ष कभी उसे खत्म नहीं होने देते इसीलिए कलाएं अमर होती हैं।

भारत देश की अनगिनत कलाओं में से एक है 'नृत्यकला'। नृत्य के नाम से ही एक आनंददायी, रोमांचित करने वाली अनुभूति होने लगती है। शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसे 'नृत्यकला' आकर्षित न करती हो। भले ही कोई व्यक्ति स्वयं नृत्य कलाकार न हो पाए किन्तु वह दर्शक बनने में भी बहुत आनंदित होता है। आज हम सभी अपने देश को आत्मनिर्भर बनाने के प्रयास में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर रहे हैं ऐसे में हमें ऐसी कलाओं की ओर भी अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए क्योंकि यदि हम प्राचीन कालीन इतिहास का अध्ययन करें तो वैदिक काल से ही नृत्यकला के प्रमाण मिलने लगते हैं। प्रत्येक युग में नृत्यकला ने समाज की अर्थव्यवस्था में एक विशेष भूमिका निभाई है। स्वर्ग से पृथ्वी पर नृत्यकला के अवतरण से सम्बन्धित अनेकों कथाएं नृत्य जगत में प्रचलित हैं। देवों के द्वारा उत्पन्न हुई इस कला को समाज में सम्मानीय स्थान प्राप्त रहा है। प्राचीनकाल में गुरू-शिष्य परम्परा के अंतर्गत शिक्षा-दीक्षा दी जाती थी। जब केवल राजपरिवारों को ही गुरू आश्रम में शिक्षा के लिए भेजा जाता था तब गुरूओं के सपरिवार भरण-पोषण की जिम्मेदारी राजाओं की ही होती थी। नृत्यकला भी गुरू-शिष्य परम्परा के द्वारा दी जाती थी। भरतनाट्यम नृत्य-शैली में गुरूओं द्वारा देवदासियों को नृत्यकला का प्रशिक्षण दिया जाता था। भरतनाट्यम के शिक्षक ''नत्तुवन'' कहे जाते हैं। इनके पास यह कला अन्य पैत्रिक कलाओं की भांति परम्परागत रूप से चली आ रही है। प्राचीनकाल में ये नत्तुवन अपनी शिष्याओं को निःशुल्क रूप से शिक्षा देते थे। जब उनकी वे शिष्याएं कला में पारंगत होकर उससे धन अर्जित करती थीं तब उस राशि का एक अंश गुरू को आजीवन समर्पित करती रहती थी।[2] इस तरह 'नृत्यकला' के द्वारा गुरू एवं शिष्य दोनों का ही जीविकोपार्जन होता रहा है। गुरू-शिष्य परम्परा में गुरू दक्षिणा भी अनिवार्य रही है। अपनी कला के प्रशिक्षण द्वारा कला गुरूओं को दक्षिणा मिलती रही है इसके लिए उन्हें किसी अन्य रोजगार पर अथवा नौकरी पर आश्रित नहीं रहना पड़ा। मध्यकाल में जब कलागुरूओं को मुगलदरबार में वेश्याओं को नृत्य सिखाने के लिए रखा गया तब भी उन्हें अपनी कला प्रशिक्षण के बदले राजाश्रय मिला। दरबारी नर्तकियों को भी पर्याप्त धन प्राप्त होता था इस तरह नृत्यकला से धनार्जन तो हो रहा था कलाकारों की आर्थिक स्थिति भी ठीक थी किन्तु अच्छे परिवार की लड़कियों को नृत्यकला का प्रशिक्षण प्राप्त करना दुर्लभ हो गया क्योंकि दरबारों में नृत्यकला के पहुँचने के बाद भद्र परिवारों में इसे अच्छा नहीं माना जाता था। जब संगीत शिक्षण संस्थाओं का प्रारंभ हुआ और युग परिवर्तन हुआ तब नृत्यकला को पुनः समाज में एक प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त हुआ। अब संस्थाओं में नृत्य शिक्षकों द्वारा नृत्यकला का विधिवत प्रशिक्षण प्राप्त हुआ। नृत्य शिक्षिकों को एक निश्चित वेतन पर नृत्य संस्थाओं में नियुक्त किया गया। प्रतिष्ठित परिवार की लड़कियों को भी अपनी प्रतिभा को निखारने और नृत्यकला का विधिवत प्रशिक्षण प्राप्त करने अवसर प्राप्त हुआ। नृत्यकला में प्रशिक्षित एवं दक्ष महिलाओं को भी नृत्य गुरू के रूप में प्रतिष्ठित एवं सम्मानजनक स्थान प्राप्त हुआ जो कि भारतीय

समाज में आत्मनिर्भर महिलाओं का जीवंत उदाहरण है। हमारे देश में मुख्य रूप से पुरूष वर्ग जीविकोपार्जन के लिए नौकरी या व्यवसाय करके धनार्जन करता है एवं स्त्रियाँ गृहणी के रूप में घर की व्यवस्थाएं सम्भालती हैं। नृत्यकला में स्त्री एवं पुरूष का ऐसा कोई भेद परिलक्षित नहीं होता दोनों को ही नृत्य कलाकार (नर्तक, नर्तकी) माना गया है एवं दोनों ही नृत्य गुरू के रूप सम्मान प्राप्त करते आए हैं। इस तरह हम देखते हैं कि नृत्यकला स्त्री एवं पुरूषों को समान रूप से आत्मनिर्भर बनाती है।

नृत्यकला केवल नृत्य के विद्यार्थियों को ही रोजगार के अवसर प्रदान नहीं करती अपितु नृत्य संगतकारों को भी रोजगार प्रदान करती है। संगतकार के रूप में तबला वादक, हारमोनियम वादक, सारंगी वादक आदि नृत्य अभ्यास एवं नृत्य प्रस्तुति में अनिवार्य रूप से उपस्थित रहते हैं जिससे कि नृत्य में सुर-ताल-लय का समन्वय एवं सामंजस्य बना रहे। इस तरह नृत्य कलाकार भले ही एकल प्रस्तुति दे किन्तु हमेशा उसके साथ एक समूह रहता है जो उस प्रस्तुति को सफल बनाने में उसका सहयोगी होता है और उस समूह का प्रत्येक व्यक्ति नृत्यकला के माध्यम से रोजगार प्राप्त कर आत्मनिर्भर जीवन यापन करता है वैसे तो वादकगण अपना स्वतंत्र वादन भी प्रस्तुत करते है एवं उसका प्रशिक्षण भी देते है लेकिन नृत्यकला में संगत उन्हें एक अलग पहचान देती है और संगतकार के रूप में स्थापित करती है। इसके अतिरिक्त बहुत से लोगों को नृत्यकला से व्यवसाय प्राप्त होता है जैसे 'टेलर'। नृत्य प्रस्तुतिकरण में नृत्य की एक निश्चित एवं आकर्षक वेशभूषा होती हैं, जिसे तैयार करने के लिए एक कुशल व्यक्ति की आवश्यकता होती है जिसे वस्त्रों की फिटिंग, लेस या गोटे से आकर्षक डिज़ाइन तैयार करने में, नृत्य की भ्रमरियों में वेशभूषा का पर्याप्त घेर दिखाने में लगने वाले कपड़े की मात्रा, अस्तर, सलमा सितारे आदि से सजाने के तरीकों का पर्याप्त ज्ञान हो। एक कुशल ड्रेस डिज़ाइनर नृत्य वेशभूषा का मटेरियल एवं रंग संयोजन सुनिश्चित करने में भी माहिर होता है। प्रत्येक नृत्यशैली की अपनी अलग वेशभूषा होती है जो उस नृत्य विशेष की प्रस्तुति को न केवल आकर्षक बनाती है बल्कि उस नृत्य की पहचान भी होती है। केवल वेशभूषा को देखकर ही सामान्य दर्शक भी अनुमान लगा लेता है कि भरतनाट्यम की प्रस्तुति होने जा रही है या कथक नृत्य की, क्योंकि प्रत्येक नृत्यशैली की वेशभूषा में पर्याप्त विविधता है। लोकनृत्यों की वेशभूषा में किसी भी अंचल विशेष की लोकसंस्कृति के स्पष्ट दर्शन होते हैं। नृत्यकला 'ड्रेस डिज़ाइनर' एवं रूप सज्जाकार को भी रोजगार के अवसर प्रदान करती है। आजकल किराये से वेशभूषा, आभूषण आदि भी एक व्यवसाय बन चुका है। चूँकि नृत्यकला एक मंचीय कला है इसलिए मंचव्यवस्था से जुड़े सभी पक्षों पर भी पर्याप्त ध्यान देने की आवश्यकता होती है जैसे मंच सज्जा, दृश्यबंध, ध्वनि व्यवस्था, प्रकाश व्यवस्था इत्यादि। मंच व्यवस्था के अंतर्गत आने वाले इन सभी महत्वपूर्ण पक्षों में संलग्न व्यक्ति भी अपने कौशल द्वारा मंचीय कलाओं की प्रस्तुति में सहयोगी वन रोजगार प्राप्त करते हैं। वैसे तो ये सभी आम व्यवसाय हैं किन्तु यदि मंच व्यवस्था के अंतर्गत इन सभी का उपयोग होता है तो इन्हें मंचीय कलाओं की प्रस्तुति के सभी पक्षो को ध्यान से अवलोकन करना अनिवार्य होता है एवं प्रस्तुति में विशेष प्रभाव उत्पन्न करने के लिए वांछित दृश्य दिखाने के लिए प्रकाश संयोजन एंव ध्वनि संयोजन पर विशेष ध्यान देकर कुशलता के साथ समायोजन स्थापित करना होता है इसलिए इन व्यवस्थाओं से जुड़े हुए व्यक्तियों से मंचीय कलाओं से सम्बन्धित विशेष कौशल की आवश्यकता अपेक्षित होती हैं। सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति के लिए विशेष प्रकार के भवनों को

निर्माण किया जाता है। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में रंगमंच के बारे में विस्तृत वर्णन किया है जिसमें भवन निर्माण की प्रक्रिया को भी विधिवत समझाया गया है। उसी के आधार पर रंगमंच निर्माण किया जाता रहा है जिसमें कलाकारों, संगतकारों, कार्यक्रम संचालक के साथ-साथ दर्शकों की बैठक व्यवस्था पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है। कलाकारों के तैयार होने के लिए एक कक्ष होता है एवं मंच पर उनके प्रवेश की व्यवस्था भी अलग होती है। दर्शकों के आवागमन की व्यवस्था भी अलग होती है। सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति के लिए इन भवनों के स्वामी द्वारा एक निश्चित राशि ली जाती है। इस तरह यह व्यवसाय भी कलाओं से सम्बन्धित है। यदि कार्यक्रम के लिए खुले मैदान में मंच तैयार करना है तो टेंट, तखत, फर्श, पर्दे, माइक, लाइट आदि के व्यवस्थापक होते हैं।

नृत्यकला से जुड़ी विविध सामग्री को बनाने एवं सुधारने वाले व्यक्ति भी इस कला से रोजगार प्राप्त करते हैं। जैसे घुँघरू, आभूषण, मेकअप सामग्री एवं प्रस्तुति को आकर्षक बनाने एवं फॉर्मेशन आदि में प्रयुक्त होने वाली प्रॉप्स। दृश्य बंध के रूप में प्रयुक्त सामग्री जैसे दृश्य के अनुसार पर्दे, कटआउट आदि। नृत्य में प्रयुक्त होने वाले वाद्यों को बनाने वाले एवं समय-समय पर उन वाद्ययंत्रों को सुधारने वाले व्यक्ति इस व्यवसाय द्वारा अपना भरण पोषण करते हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि केवल नृत्यकला से ही कितने व्यवसाय स्वतः ही संचालित हो रहे हैं जैसे कोरियोग्राफी नृत्य के कलाकारों के लिए आजकल बहुत प्रचलित रोजगार है, जिसमें पर्याप्त धनार्जन के अवसर हैं क्योंकि आजकल बहुत से ऐसे कार्यक्रम होते है जिनमें नृत्य संरचना के लिए नृत्य विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है ये कार्यक्रम पारिवारिक भी होते है और मंचीय भी जैसे आजकल वैवाहिक एवं अन्य मांगलिक अवसरों पर महिला संगीत का आयोजन, इंडियन आइडियल, टेलेन्ट हंट जैसे शो में भी कोरियोग्राफर को अवसर मिलते है। आधुनिकीकरण के चलते बहुत से तकनीकि प्रयोग भी कलाओं में किये जा रहे हैं जैसे कम्प्यूटर एवं अन्य उपकरणों द्वारा म्यूज़िक कम्पोजीशन, रिकॉर्डिंग एवं अन्य प्रभाव उत्पन्न करना आदि। टेक्निकल फील्ड के लोगों को भी इस क्षेत्र में रोजगार के पर्याप्त अवसर हैं।

एक कलाकार अपने कौशल के कारण कभी भी पराधीन नहीं होता बल्कि उसमें अन्य व्यक्तियों को भी रोजगार के द्वार खोलने का सामर्थ्य होता है। सरकार द्वारा नृत्यकला को अन्य विषयों की भांति शैक्षणिक विषयों में शामिल कर नृत्यकला के विद्यार्थियों को सरकारी नौकरी के अवसर भी प्रदान किये हैं। प्राइवेट संस्थानों में भी नृत्य शिक्षक की नौकरी मिल जाती है। सरकार की विभिन्न योजनाएं, छात्रवृत्तियाँ आदि आर्थिक रूप से कमजोर नृत्य के विद्यार्थियों को सहारा देकर उन्हें कलाकार के रूप में प्रतिष्ठित करने में विशेष सहयोग प्रदान करती हैं आवश्यकता है जागरूक रहने की।

सन्दर्भ -

1. गर्ग, डॉ. लक्ष्मीनारायण; कथक नृत्य, संगीत कार्यालय, हाथरस - 204101 (उ.प्र.), दसवाँ संस्करण, पृ. 71, मार्च 2016,
2. दाधीच, डॉ. पुरू; कथक नृत्य शिक्षा-प्रथम भाग, बिन्दु प्रकाशन, इंदौर 452001 (म.प्र.), चतुर्थ संस्करण, पृ. 11, 2002